Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 7 | ISSUE : 3 | MARCH 2021

धार्मिक परिप्रेक्ष्य में गांधी एवं नेहरू के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ अभिलाषा आबूसरिया [1] | डॉ अर्चना गोदारा [2]

[1] सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान राजकीय कन्या महाविद्यालय झुन्झुनू.

2 सहायक आचार्य, समाजशास्त्र, राजकीय नेहरू मेमोरियल महाविद्यालय, हनुमानगढ़.

ABSTRACT:

गांधीजी एक आर्दशवादी और दार्शनिक चिंतक थे। गाँधी के अनुसार धर्म और नैतिकता समाज को एकता के सूत्र में बांधते हैं। धर्म के विषय में गाँधी का दृष्टिकोण नैतिक मूल्यों, मानवीय मूल्यों और कर्तव्यपरायणता पर आधारित था। गाँधी ने राजनीति में धर्म और नैतिक मूल्यों का समावेश किया तथा राजनीति के अध्यात्मीकरण को अपनाया। वहीं नेहरु एक यथार्थवादी, व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक चिंतक थे। उनके अनुसार धर्म ने समाज में बुराईयां पैदा की हैं इसलिए वह धर्म को राजनीति से पृथक रखना चाहते थे। नेहरू ने धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण को अपनाया और पंथनिरपेक्षता को प्रोत्साहन दिया।

KEYWORDS:

मानवतावादी, यथार्थवादी, धर्मनिरपेक्ष, पंथनिरपेक्षता.

गांधीजी का दर्शन धर्म एवं अध्यात्मवाद से जुड़ा है। गांधीजी धार्मिक रूढिवादिता और धर्मान्धता के समर्थक नहीं थे, धर्म के विषय में उनका दृष्टिकोण लौकिक एवं मानवतावादी था गांधी ने धर्म की व्याख्या मूल रूप से नैतिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में की है। गांधीजी ने कहा कि– ”धर्म वह है जो मनुष्य की प्रकृति को परिवर्तित कर देता है, जो मनुष्य को सत्य से बाँध देता है और उसे परिष्कृत करता है। यह मानव की प्रकृति में स्थायी तत्व ह जो मानव आत्मा को उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति तक महान् बनाने में कोई कमी नही रखता, जो आत्मा को तब तक आराम नहीं लेने देता जब तक कि वह अपने स्वरूप को न पहचान ले, अपने सृजनकर्ता को न जान ले और अपने एवं सृजनकर्ता के बीच सच्चे सम्बन्ध को न समझ ले।[1] गांधी के अनुसार धर्म नैतिकता को व्यवहार में धारण करने की पराकाष्ठा है। सत्य और अहिंसा के पालन के लिए धर्म में विश्वास होना आवश्यक है। सत्याग्रही के लिए ईश्वर में आस्था होना आवश्यक है । सत्याग्रही का एकमात्र अवलम्ब ईश्वर होता है, जिन्हे ईश्वर में आस्था नही है, वे सत्याग्रही नहीं बन सकते। गांधी के लिए धर्म का अर्थ ईश्वर से एकत्व है और वह एक गतिशील नैतिक शक्ति है इसलिए राजनीति में धर्म के समावेश का अर्थ न्याय की ओर आगे बढ़ना था और व्यक्तिगत सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन में धार्मिक आचारों को मजबूत बनाया जाना चाहिए क्योंकि धर्म समाज को एकता के सूत्र में बांधता है।

जवाहरलाल नेहरू नैतिक आचरण और मानवीय मूल्यों को आत्मसात् करने के लिए किसी धर्म में विश्वास करना आवश्यक नहीं मानते है । वे धर्म की वर्तमान व्यावहारिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए धर्म से अलग रहकर ही वैयक्तिक और राजनीतिक जोवन व्यतीत करने में विश्वास करते हैं । नेहरू के अनुसार धर्म ने मनुष्य को स्वकेन्द्रित कर दिया है और उसे सामाजिक उत्तरदायित्वों एवं आदर्शो से बिल्कुल अलग कर दिया है।[2] नेहरू का मानना था कि धर्म मनुष्य की सृजनात्मक शक्ति और योग्यता को कुठित करता है और ईश्वर पर बहत अधिक निर्भरता मानवीय स्वतन्त्रता के लिए घातक है इसलिए मानवीय आचरण के नियामक तत्वों के रूप में धर्म को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

नेहरू रचनात्मक समाज के निर्माण में विवेकशीलता, सामाजिक सदाचार, सत्य और नैतिकता की अहम् भूमिका मानते थे। उनके अनुसार धर्म ने समाज में बुराईयाँ पैदा की है। इसके विपरीत गांधी के लिए 'धर्म' प्राण के समान है । नेहरू धर्म के साथ ईश्वर में आस्था होना आवश्यक नही मानते है । जबकि गांधी धर्म को पूर्णत ईश्वर में विश्वास होने के साथ जोड़ते है और सत्य और अहिंसा के पालन के लिए धर्म म विश्वास होना आवश्यक मानते हैं । गांधी के शब्दो में ईश्वर एक जीवित या सचेतन सत्ता है। हमारा जीवन उसी शक्ति का प्रतीक है, वह शक्ति हमारे अन्दर है, जो उस महान् शक्ति के अस्तित्व को अस्वीकार करता है, वह उस पतवारविहीन जहाज के समान हो जाता है जो कि इधर–उधर भटकता रहता है और अपने गन्तव्य पर पहुंचे बिना नष्ट हो जाता है।[3]

गांधी एक आदर्शवादी और दार्शनिक चिन्तक थे। वे राजनीति का आध्यात्मीकरण करना चाहते थे। उन्होने राजनीति में नैतिक मूल्यों के समावेश पर बल दिया। वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों को आत्मसात करना चाहते थे और इन मूल्यों को प्राप्त करने के लिए केवल ईश्वरीय शक्ति पर अवलम्बित रहना चाहते थे, अन्य बाह्य उपादानो का सहारा नहीं लेना चाहते थे । वे राज्य के केन्द्रीय नियोजन और नौकरशाही के विरूद्ध थे।

नेहरू एक यथार्थवादी, वैज्ञानिक एवं मानववादी चिन्तक थे। वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आदर्श और व्यवहार में सामंजस्य स्थापित करना चाहते थे क्योंकि वे मनुष्य की कमजोरियों से परिचित थे। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति की स्वचेतना इतनी विकसित नही हो सकती कि वह सामाजिक सहयोग, सामाजिक एकता और साहचर्य को जन्म दे, बल्कि प्रायः मनुष्य की कमजोरियाँ और सामाजिक ढांचा, सामाजिक शोषण और अन्याय का कारण होता है । नेहरू रचनात्मक विकास के लिए व्यक्ति की स्वतन्त्रता के समर्थक है और विषमताओं को समाप्त करने के लिए बाह्य उपादानों जैसे आर्थिक नियोजन, राष्ट्रीयकरण, सीमित केन्द्रीयकरण आदि व्यवस्थाओं का समर्थन करते हैं।[4] वे शोषणविहीन समाज की स्थापना के लिए सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाने की बात करते हैं।

धर्मनिरपेक्षता अथवा पंथनिरपेक्षता की अवधारणा धर्म की अवधारणा के साथ सम्बंधित है। धर्मनिरपेक्षता के प्रति गांधी और नेहरू के दृष्टिकोण में समानताएँ और असमानताएँ दोनो हैं। गांधी धार्मिक दृष्टिकोण से धर्मावलम्बियों के प्रति सहिष्णुता और उदारता के भाव को आवश्यक मानते थे । उनके लिए दूसरे धर्मावलम्बियों के प्रति सहिष्णुता तथा 'सर्वधर्म समभाव सच्ची धार्मिक भावना की पूर्व शर्त है। गांधीजी ने धर्मनिष्ठता को साम्प्रदायिक सद्भाव की अनिवार्यता की शर्त माना। उनका विश्वास था कि एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति जीवन के किसी भी क्षेत्र में निष्क्रिय नहीं रह सकता क्योंकि ईश्वर के प्रति आस्था, उसे जीवन के किसी भी क्षेत्र में विद्यमान बुराइयों का प्रतिकार करने के लिए अनिवार्य रूप से प्रेरित करेगी। गांधी ने धर्म का मर्म मानव मात्र की सेवा माना। वे सभी धर्मों के प्रति समान आदर भाव रखते थे। गांधी कहते थे हमे सब धर्मो के प्रति समभाव रखना चाहिए इससे अपने धर्म के प्रति उदासीनता नही आती, बल्कि स्वधर्म विषयक प्रेम अन्धा न रहकर ज्ञानमय हो जाता है, अधिक सात्विक, निर्मल बनता है। सब धर्मो के प्रति समभाव आने पर ही हमारे दिव्य चक्षु खुल सकते है। धर्मान्धता और दिव्य दर्शन उत्तर– दक्षिण जितना अन्तर है। सभी धर्मो के मूल सिद्धान्त एक ही है। धर्म का मूल एक है, जैसे वृक्ष का, पर उसके पत्ते असंख्य है।[5]

नेहरू की औपचारिक अथवा संस्थाबद्ध धर्म में आस्था नहीं थी। उन्होंने धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा का समर्थन सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक धरातल पर किया।[6] नेहरू की दृष्टि में भारत जैसे विविधतापूर्ण राष्ट्र में एकता को बनाये रखने का मार्ग धर्मनिरपेक्षता है। धर्मनिरपेक्षता वैज्ञानिक और आधुनिकतावादी धारण है। इसमें राज्य को धर्म के आधार पर अपने नागरिको में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करना चाहिए। व्यक्ति को अपने अन्तःकरण और विश्वास की स्वतन्त्रता का पालन करते हुए अन्य धार्मिक विश्वासों के प्रति सहिष्णुता और सौहार्द्र का भाव रखना चाहिए। धर्मनिरपेक्षता धार्मिक कट्टरता का निषेध करती है तथा सामाजिक जीवन में साम्प्रदायिक सद्भावना का समर्थन करती है।

नेहरू और गांधी दोनो समान रूप से धर्म को व्यक्तिगत आस्था का विषय मानते हुए धार्मिक कार्यो में राज्य के हस्तक्षेप का विरोध करते है और एक पंथनिपेक्ष राज्य की अवधारणा का प्रतिपादन करते है नेहरू व गांधी समान रूप से राज्य से यह अपेक्षा करते है कि वे सारे धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण रखे तथा उन्हे विधि का समान सरंक्षण प्रदान करे नेहरू ने संविधान में भी पंथनिरपेक्षता की अवधारणा को समाहित किया जिसका गांधीजी ने सम्मानपूर्वक समर्थन किया।

उपरोक्त तुलनात्मक अध्ययन का सारांश है कि गांधी 'धर्म' को नैतिक शक्ति मानते थे जो व्यक्ति को ईश्वर प्राप्ति में सहायक थी। गांधी की धर्म में अगाध श्रद्धा थी, नेहरू की धर्म के प्रति स्वाभाविक आस्था नही थी। उनका दृष्टिकोण मूलतः इहलोकिकवादी और वैज्ञानिक था । वे भारत में प्रचलित धर्म के रूप से खिन्न थे धर्म के रूप प्रचलित अन्धविश्वासों, रूढियों और कट्टरता को देखकर उन्हे गम्भीर क्लेश होता था। नेहरू ने धर्म से सम्बन्धित बुराइयों की दूर करने का प्रयत्न किया नेहरू धर्म को राजनीति से पृथक रखना चाहते थे जबकि गांधी धर्मनिष्ठ राजनीति को मानव कल्याण के लिए आवश्यक मानते हुए राजनीति के आध्यात्मीकरण के प्रबल समर्थक थे।

REFERENCES

1. गांधी हिजलाइफ, राइटिंगज एण्ड स्पीचेज, मद्रास गणेश, 1921, 807.

2. जवाहरलाल नेहरू, डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, कोलकाता, सिगनेट, 1945, 453.

3. महात्मा गांधी, हरिजन, 207, 1947, 240.

4. राघवन अय्यर, द मॉरल एण्ड पालिटिकल थाट ऑफ महात्मा गांधी, आक्सफोर्ड, 1978 368.

5. जैन यशपाल (सम्पादक), सर्वधर्म समभाव सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ.8 (महात्मा गांधी का लेख सर्वधर्म समभाव)

6. डॉ पुरुषोतम नागर, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1994, पृ. 332.